



हिन्दी माध्यम का सर्वश्रेष्ठ संस्थान निर्माण IAS

सफलता का पर्याय कमल देव (K.D.)

DR. RAHEES SIR (विशेषज्ञ : वैदेशिक मामले)

नये शीतयुद्ध की दस्तक

आजकल वैश्विक मीडिया और थिंक टैंक एक दुनिया में नए संघर्ष को लेकर चर्चा में हैं जिसमें शांति और युद्ध के बीच की विभाजक रेखा निरंतर धुंधली होती जा रही है। इसे 'न्यू कोल्ड वार' अथवा 'हाइब्रिड वारफेयर' की संज्ञा दी जा रही है। ऐसा माना जा रहा है कि रूस तथा चीन शीत युद्ध के बाद की दुनिया में उदारवादी सोच से सहमत नहीं हैं और पश्चिमी देश इन देशों पर अपनी मर्जी नहीं थोप पा रहे हैं इसलिए एक तरह से पुराना शक्ति संघर्ष लौट रहा है। तब क्या यह मान लिया जाए कि दुनिया नए शीतयुद्ध की चपेट में है? लेकिन अब पूंजीवाद और साम्यवाद के बीच टकराव तो रहा नहीं, जो 1945 से 1990 के बीच देखा गया था, फिर संघर्ष की असल वजह क्या है?

किस रूप में देखें, नए शीतयुद्ध को?

लुई हाल ने अपनी पुस्तक 'द कोल्डवॉर एज ऑफ हिस्ट्री' में लिखा है कि कि दो गुटों के मध्य तीव्र तनाव की स्थिति शीतयुद्ध की स्थिति है। यह स्थिति सशस्त्र युद्ध से भी अधिक भयंकर होती है जिसके विभिन्न पक्ष समस्याओं को उलझाने का प्रयास करते हैं, बजाय इसे सुलझाने के। इस समय उत्तरी गोलार्द्ध में निहित दुनिया में जिस तरह की गतिविधियां जन्म ले रही हैं और वे युद्ध और सशस्त्रीकरण के जिस मनोविज्ञान से सम्पन्न हैं, इसलिए शीतयुद्ध की संभावना को खारिज तो नहीं किया जा सकता। दरअसल पिछले कुछ दिनों में यूरोप और अमेरिका द्वारा रूसी राजनयिकों का निष्कासन किया गया और ऐसी ही प्रतिक्रिया रूस ने की, वह किसी शांति और विश्वास के मनोविज्ञान का परिचय नहीं देती। नाटो महासचिव तथा अन्य यूरोपीय सरकारों ने रूसी राजनयिकों के निष्कासन सम्बंधी घोषणा को यह तर्क देकर उचित ठहराया है कि रूस जो व्यवहार कर रहा है यह उसी का परिणाम है। यूरोपीय देशों का आरोप था कि ब्रिटेन में रह रहे पूर्व रूसी जासूस सर्गेई स्क्रिपाल और उनकी बेटी यूलिया पर रूस ने 4 मार्च, 2018 को नर्व एजेंट से हमला करवाया था। भले ही रूस ने इन आरोपों को बेबुनियाद बताकर इसे खारिज किया हो लेकिन इससे यह संदेश तो जाता ही है कि यूरोप और रूस के बीच राजनयिक सम्बंधों की कड़ियां टूट रही हैं। ट्रंप का यह ट्वीट- "तैयार हो जाओ रूस क्योंकि वे आ रही हैं। उम्दा, नई और स्मार्ट", जो सीरिया में मिसाइल हमले से ठीक पहले आया था, आखिर संदेश दे रहा है। क्या ऐसा नहीं लगता कि यह संघर्ष अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के सम्पूर्ण तंत्र एक दिन विनष्ट कर देगा।

इसके उदाहरण के रूप में हम देख सकते हैं-

1. अमेरिकी सुपरमैसी के सिद्धांत को दुनिया पर थोपने का प्रयास।
2. सैन्य संगठनों की उपस्थिति : नाटो पहले से ही मौजूद है लेकिन आज क्वैड और शंघाई सहयोग संगठन को भी इसी प्रारूप के निकट देखा जा सकता है।
3. ट्रेड वॉर
4. साइबरवाद
5. संरक्षणवाद
6. दुनिया को पुनः नयी विभाजक रेखाओं द्वारा बांटने का ग्रेट गेम

कारण

यहां पर एक प्रश्न यह भी है कि वे वजह कौन सी हैं जिनके चलते रूस और अमेरिका-यूरोप शीतयुद्ध की ओर खिसकने को मजबूर हैं?

नाटो की प्रवक्ता का पिछले दिनों एक बयान आया। उनका कहना था कि-

1. हमने क्रीमिया पर अवैध कब्ज़ा।
 2. पूर्वी यूक्रेन को लगातार अस्थिर किया जाना।
 3. आर्कटिक से लेकर मध्य-पूर्व और भूमध्यसागर तक सेना का बड़ा जमावड़ा।
 4. साइबर हमलों के ज़रिए लोकतांत्रिक प्रक्रिया में दखल जो बीते कई सालों में स्थापित एक व्यापक पैटर्न बन चुका है।
- अतः रूस के लिए यह संदेश ज़रूरी है। लेकिन यह पैटर्न केवल रूस द्वारा ही नहीं अपनाया गया बल्कि अमेरिका, यूरोपीय देश और चीन आदि सभी इस महासागर में गोते लगा रहे हैं।

नये शीतयुद्ध में नया क्या है?

गम्भीरता से देखा जाए तो 1950 से 1990 के बीच सोवियत संघ और अमेरिकी नेतृत्व वाली पश्चिमी दुनिया के बीच चले वैचारिक और सैन्य झगड़े की कुछ हद तक पुनरावृत्ति वर्तमान तनावों में दिख रही है। हां थोड़ी देर के लिए हम कह सकते हैं कि शीत युद्ध द्विध्रुवीय दुनिया की देन था जिसमें दो महाशक्तियां अपनी आर्थिक और सैन्य ताकत के साथ वैश्विक राजनीति को अपने अनुकूल बदलने के लिए एक दूसरे से प्रतिस्पर्धा कर रही थीं। लेकिन आज जो प्रतिस्पर्धा है वह शक्तियों के संतुलन या किसी वैश्विक विचारधारा के कारण नहीं है बल्कि नेताओं के सोच-समझकर लिए गए फैसलों, रणनीतियों और अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में स्पष्ट रूप से नज़र आने वाले मतभेदों की वजह से है। इन हालातों को टाला जा सकता था लेकिन ऐसा हुआ नहीं।

दूसरे विश्वयुद्ध के बाद असली युद्ध अंगोला, क्यूबा से लेकर मध्य पूर्व में लड़ा जा रहा था। इसके विपरीत वर्तमान समय में युद्ध की ज़मीन जॉर्जिया और यूक्रेन में तैयार हो चुकी है और ये रूस के बेहद करीब हैं। शीतयुद्ध दो गुटों और व्यवस्थाओं के बीच संघर्ष था। जबकि आज जो लड़ाई है वह अंतर्राष्ट्रीय शक्तियों के समूह में एक शक्ति के रूप में स्वयं को बचाए रखने की है और मुख्यतया रूस व अमेरिका के बीच है। हालांकि कूटनीति के कुछ अमेरिकी विद्वान मानते हैं कि यह संघर्ष अमेरिका के लिए बेहद कम्प्यूजिंग है। अमेरिकी नेवल वॉर कॉलेज के रिसर्च प्रोफेसर गोल्डस्टीन का कहना है कि पश्चिमी देशों में कई लोग शीत युद्ध के बाद दुश्मनों की कमी की बीमारी से जूझ रहे रहे हैं। ऐसा लगता है कि कई राष्ट्रीय सुरक्षा विशेषज्ञ एक ऐसा खतरा चाहते हैं जिसे आसानी से चित्रित किया जा सके। यही वजह है कि रूस को लगातार कम करके आंका जा रहा है। सच यह है कि ऐतिहासिक रूप से पश्चिम की तुलना में तकनीक, राजनीति और आर्थिक विशेषज्ञता में भले ही वह पिछड़ा रहा हो लेकिन अंतर्राष्ट्रीय तंत्र में मॉस्को लगातार अपने आर्थिक प्रभाव से ज़्यादा असरदार रहा है और वह एक क्षेत्रीय ताकत है।

बराबरी की हैसियत वाले प्रतिस्पर्धी

नाटो देशों में रक्षा बजट पर ज़्यादा खर्च करने को लेकर तर्क दिए जा रहे हैं और एक बार फिर 'बराबरी की हैसियत वाले प्रतिस्पर्धी' के साथ संघर्ष के लिए तैयार होने की बात कही जा रही है। सवाल यह उठता है कि ये 'बराबरी की हैसियत वाले प्रतिस्पर्धी' हैं कौन? रूस या चीन या फिर दोनों? इसमें संशय नहीं होना चाहिए कि रूस की सेना अमेरिका और नाटो की संयुक्त सेनाओं की तुलना में कमजोर साबित होगी इसलिए वह उन्हें टक्कर तो नहीं दे सकती लेकिन रूस ने बीते 15 वर्षों में बेहद बुद्धिमानी से इस क्षेत्र में निवेश किया है जिससे वह कुछ खास क्षमताएं विकसित करने में सफल रहा है। उदाहरण के तौर पर प्रोफेसर गोल्डस्टीन के अनुसार नाटो के पास रूस के इस्कंदर टेक्टिकल न्यूक्लियर मिसाइल का असली

तोड़ नहीं है। आर्टिलरी और इलेक्ट्रॉनिक वॉरफेयर के पास जो क्षमता है, उसे कमतर नहीं आंका जा सकता। भले ही रूस के राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन टैक्नोफोब हों लेकिन रूस की साइबर और सूचना युद्ध में जबर्दस्त क्षमता है, जिसका उदाहरण अमेरिकी राष्ट्रपति के चुनाव में देखा जा चुका है।

अमेरिका रूस के साथ है या उसके खिलाफ?

यही वजह है कि ट्रंप की विजय के बाद 'मॉस्को पीवोट' की नीति चर्चा में आयी थी जिसकी सलाह लगभग 45 वर्ष पहले राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन को उनके राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार हेनरी किसिंजर ने दी थी। लेकिन बीते वर्ष अगस्त में अमेरिकी कांग्रेस ने 'द काउंटरिंग अमेरिकाज एडवर्सैरिज़ थ्रू सैन्क्शन्स ऐक्ट (सीएएटीएसए)' पारित कर दिया। इस कानून का उद्देश्य वर्ष 2016 में अमेरिकी राष्ट्रपति चुनावों में कथित तौर पर हस्तक्षेप करने और यूक्रेन में उसकी हरकतों के लिए सज़ा देना था। खास बात यह है कि अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने इस प्रस्ताव पर हस्ताक्षर करने के बाद भी यह कहा था कि वे सीएएटीएस ऐक्ट का समर्थन नहीं करते। वे इसे पहले ही इसे असंवैधानिक कह चुके हैं। इसके तहत अमेरिकी प्रशासन एक सूची तैयार की जैसे अनौपचारिक रूप से 'पुतिन सूची' कहा गया। इस सूची में 210 नाम हैं जिनमें से 114 या तो सरकार में हैं या सरकार से जुड़े हैं और कुछ व्यवसायी हैं। इसमें 96 ऐसे लोगों के नाम भी थे जिनकी रूसी सरकार से निकटता नहीं थी बल्कि उनकी संपत्ति एक खरब डॉलर से अधिक थी। यही वजह है कि रूसी प्रधानमंत्री दिमित्री मेदवेदेव ने सीएएटीएस ऐक्ट का उद्देश्य अमेरिका द्वारा रूस के खिलाफ 'ट्रेड वॉर' की घोषणा बताया था। ध्यान रहे कि अमेरिकी कांग्रेस ने इन प्रतिबंधों के लिए मुख्य रूप से क्रीमिया मुद्दे को उत्तरदायी माना था। लेकिन सवाल यह है कि अमेरिका व यूरोप क्रीमिया के कीचड़ में क्यों धंसना चाह रहे हैं?

ब्लैक सी में शक्ति संतुलन का सवाल

सलिए कि वे यूक्रेन के हितैषी हैं या फिर यह उनके लिए एक तरफ यूरेशियाई प्रवेश द्वार है और दूसरी तरफ काला सागर में शक्ति संतुलन की टैक्टिक्स का आधार? अब क्रीमिया पर रूस का कब्जा है अतः अमेरिका का काला सागर (ब्लैक सी) पर एकाधिकार स्थापित करने का सपना टूट गया या यूरोप का यूक्रेन के जरिए रूस को कमजोर करने और यूरेशियाई क्षेत्र में घुसपैठ करने का मिशन असफल हो गया। ध्यान रहे कि क्रीमिया की भौगोलिक स्थिति, उसकी रणनीतिक महत्ता और वहां से मध्य-पूर्व को हैंडल करने की अमेरिका-ईयू की महत्वाकांक्षा, रूस के खिलाफ एकजुट होकर लड़ने के लिए प्रेरित करती है। यही वजह है कि अमेरिकी विशेषज्ञों की तरफ से अमेरिकी प्रशासन के लिए यह सुझाव भी आया था कि अमेरिका उसी तरह से रूस से लड़े जिस तरह से उसने अफगानिस्तान में 1980 के दशक में लड़ा था।

ट्रेड वॉर

ट्रेड वॉर नये शीतयुद्ध का सबसे प्रभावशाली उपकरण है। आज का समय बाजारवादी पूंजीवाद का है इसलिए वह देश ही अंत में विजयी होगा जो दूसरे देश के लिए बाजार की परिधियों को संकुचित या सीमित कर देगा अथवा बंद कर देगा। पहले चरण में उत्पादों के बाजार सीमित या समाप्त किए जाएंगे फिर पूंजी का बाजार। इसका प्रत्यक्ष असर तो उन दो देशों पर पड़ेगा जो सीधी लड़ाई लड़ रहे हैं लेकिन सच यह है कि इसका प्रभाव बड़ी दूर तक पड़ेगा यानि वे देश भी इसकी चपेट में आ जाएंगे जो इनमें से किसी एक साथ किसी भी तरह का सम्बंध रखते होंगे।

चीन कहां होगा?

इस नवनिर्मित शीतयुद्ध के वातावरण में चीन कहां पर है और किस तरह की भूमिका में है, यह प्रश्न भी अहम है। गौर से देखें तो रूस-चीन बहुत से विरोधाभासों के बावजूद एक ध्रुव बनते नजर आ रहे हैं। चीन के नए रक्षा मंत्री जनरल वेई फेनघे ने मॉस्को दौरे के समय कहा था- “चीनी पक्ष यहां (मॉस्को) आकर अमेरिकियों को दिखा रहा है कि चीन और रूस

की सेनाओं के बीच गहरे संबंध हैं।” पश्चिम और रूस के बीच बढ़ती तनातनी के बीच चीनी रक्षा मंत्री का मॉस्को दौरा रूस को समर्थन देने के इरादे से ही हुआ है। चूंकि इस समय अमेरिका और चीन के बीच ट्रेड वार छिड़ा हुआ है, अतः दोनों देश एक दूसरे की आलोचना करते हुए और भी कड़े कदम उठाने की चेतावनी दे रहे हैं। ऐसे में बीजिंग-मॉस्को दुनिया को यह संदेश देना चाहते हैं कि उनका नजरिया एवं चिंताएं अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं को लेकर समान हैं। खास बात यह है कि चीन के नए रक्षा मंत्री को नियुक्त करने के पीछे राष्ट्रपति शी जिनपिंग की मंशा है अर्थात् सेना का आधुनिकीकरण ताकि सेना को साइंस फिक्शन जैसे अत्याधुनिक युद्धों के लिए तैयार किया जा सके। दूसरी तरफ रूस ऐसी हाइपरसॉनिक मिसाइलें बनाने की ओर अग्रसर है जो हर किस्म के डिफेंस सिस्टम को भेदने में समर्थ हों। एक बात और चीन के ‘बेल्ट एण्ड रोड इनीशिएटिव’ प्रोजेक्ट का खासा हिस्सा यूरेशियाई भाग में पड़ता है, जिसे सम्पन्न करने में रूस कहीं अधिक निर्णायक साबित हो सकता है, जबकि अमेरिका कभी भी नहीं चाहेगा कि चीन इसमें सफल हो। इसलिए ऐसी संभावना है कि रूस-चीन एक शक्ति ध्रुव (पॉवर पोल) बनें।

मॉस्को-बीजिंग-इस्लामाबाद समीकरण

इधर कुछ समय से पाकिस्तान वाशिंगटन से दूर हटता दिख रहा है और बीजिंग होते हुए मॉस्को के करीब पहुंच रहा है। दरअसल चीन लम्बे समय से पाकिस्तान को हथियार एवं आर्थिक मदद देकर अपने लिए दक्षिण एशिया का इजरायल बनाना चाह रहा है जिसके पीछे उसका अपना छुपा हुआ रणनीतिक एजेंडा है। इसे ‘स्ट्रिंग ऑफ पलर्स’ एवं ‘चाइना-पाकिस्तान इकोनॉमिक कॉरिडोर’ के निर्माण के रूप में देखा जा सकता है जिसमें से पहला भारत को हिंद महासागर की तरफ से घेरने की युक्ति के तहत निर्मित हुआ है और दूसरा उत्तर और पश्चिम की ओर से। पिछले कुछ समय से रूस भी पाकिस्तान की ओर खिसक रहा है, इसलिए अब दक्षिण एशिया में एक रणनीतिक त्रिभुज बनने की भी संभावनाएं दिखने लगीं हैं। इस संभावना को दो कार्य-कारणों सम्बंधों के तहत देखा जा सकता है। प्रथम-रूस द्वारा पाकिस्तान को हथियारों की आपूर्ति करने के निर्णय और द्वितीय-पाकिस्तान द्वारा रूस को ग्वादर में साझेदार बनाने की पहल, के तहत। हालांकि अभी भी भारत की तीनों सेनाओं की लॉजिस्टिक्स आपूर्ति का अधिकांश भाग रूस से ही आता है। पांचवीं पीढ़ी के 250 लड़ाकू विमानों के संयुक्त विकास और उत्पादन के बारे में समझौता स्वीकार कर चुका है। लेकिन मॉस्को से रणनीतिक साझेदारी स्थापित करने में भारत चीन-पाकिस्तान के मुकाबले पीछे दिख रहा है। शायद इसलिए क्योंकि भारत का झुकाव वाशिंगटन की तरफ अधिक है।

भारत की राह

भारत वाशिंगटन के साथ जो संयुक्त रणनीतिक प्रयास कर रहा है या गठबंधन बना रहा है उसे न केवल चीनी मीडिया बल्कि भारतीय मीडिया भी चीन के खिलाफ रणनीतिक घेरेबंदी के रूप में देखने और पेश करने की कोशिश करती है, जिससे स्थितियां और जटिल हो जाती हैं। अमेरिका को इस समय या कम से कम तब तक जब तक कि हिन्द-प्रशांत में भारत का साथ चाहिए जब तक कि उत्तर कोरिया नियंत्रण में नहीं आ जाता और चीन दबाव में। अतः अमेरिकी प्रशासन भारत से निकटता प्रदर्शित करने हेतु यह घोषणा तक करता है कि भारत अमेरिका का ‘मेजर डिफेंस पार्टनर’ है और 99 प्रतिशत अमेरिकी डिफेंस टेक्नोलॉजी को एक्सेस कर सकता है। इसकी अगली कड़ी क्वैड (रणनीतिक चतुर्भुज) का निर्माण है जो भारत, अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया के संयुक्त प्रयासों का परिणाम है। इंडो-पेसिफिक क्षेत्र में चीन, जापान, सिंगापुर, अमेरिका, दक्षिण कोरिया, ऑस्ट्रेलिया और कनाडा जैसे देश आ जाते हैं जिनकी वित्तीय और सैन्य शक्ति को ध्यान में रखते हुए भारत क्वैड के निर्माण में सक्रियता दिखाता है तो निश्चित तौर पर सामरिक सुरक्षा के लिहाज से भारत के लिए लाभदायक है। ध्यान रहे कि चीन की बढ़ती क्षेत्रीय ताकत और साम्राज्यिक महत्वाकांक्षा जितनी चुनौतीपूर्ण जापान और ऑस्ट्रेलिया अथवा अमेरिका के लिए है, उतनी ही भारत के लिए भी। दक्षिण चीन सागर और डोकलाम में होने वाली घटनाएं इसे स्पष्ट करती हैं। इसके अतिरिक्त हिन्द महासागर में स्ट्रिंग ऑफ पलर्स धीरे-धीरे अपनी व्यवहारिक स्थिति को ग्रहण कर रहा है और सीपेक (चाइना-पाकिस्तान इकोनॉमिक कॉरिडोर) व ‘बेल्ट एवं रोड इनीशिएटिव’ (बीआरआई) के जरिए चीन

भारत की सम्प्रभुता तथा अखण्डता के लिए चुनौती पेश कर रहा है। ऐसे में भारत के लिए यह जरूरी है कि वह हिन्द-प्रशांत क्षेत्र की शक्तियों के साथ गठबंधन बनाए। लेकिन अमेरिका फर्स्ट भारत के लिए चुनौती बन सकता है। वैसे भी भारत चाहे-अन-चाहे नए शीतयुद्ध की चपेट में आता दिख रहा है। इसे दो परिप्रेक्ष्यों में देख सकते हैं-ट्रेड वॉर और द्वितीय-ईरान के साथ सम्बंध।

लेकिन भारत इन क्षेत्रों में लाभ तभी प्राप्त कर सकेगा, जब गठबंधन और गठबंधन के सदस्यों का उद्देश्यों व लक्ष्यों के प्रति विचार समान एवं विज़न स्पष्ट हो। जबकि क्वैड को लेकर भ्रम है। पहला भ्रम तो सभी सदस्य देशों के बयानों में मौजूद मतभेदों में दिखा। चारों देश 'मुक्त और खुले भारत-प्रशांत' (फ्री एण्ड ओपन इंडो-पेसिफिक) की सुरक्षा के लिए प्रतिबद्ध हैं लेकिन भारत के विदेश मंत्रालय की तरफ से आए बयान में 'मैरीटाइम सिक््योरिटी' (समुद्री सुरक्षा) का उल्लेख उद्देश्यों के रूप में नहीं किया गया है जबकि अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया और जापान ने किया। इसी तरह से जापानी विदेश मंत्रालय ने अपने उद्देश्यों में 'कनेक्टिविटी को बढ़ाने' (इनहैंसमेंट ऑफ कनेक्टिविटी) का कोई उल्लेख नहीं किया है जबकि शेष तीन देशों ने इसे प्रमुखता दी। आखिर इन चूकों का मतलब क्या है? क्वैड का वास्तविक उद्देश्य है : मैरीटाइम सिक््योरिटी, कनेक्टिविटी, इण्डो-प्रशांत की तरह चीन के सरकने तथा बेल्ट एण्ड रोड इनीशिएटिव पर चीन को घेरने का या फिर एक साथ सभी मोर्चों पर आगे बढ़ने का। लेकिन डोनाल्ड ट्रंप ने क्या किया? वे स्वयं बीजिंग यात्रा पर गये और कई समझौतों पर हस्ताक्षर किए गये। इन समझौतों में एक समझौता दोनों देशों द्वारा 40 बिलियन डॉलर का 'सिल्क रोड फंड' नाम से संयुक्त फंड निर्मित करने सम्बंधी भी हुआ। यह फंड बीआरआई प्रोजेक्ट का वित्तपोषण करेगा, जबकि भारत इसका विरोध कर रहा है। इसी प्रकार से सीरिया को लेकर जो स्थितियां बन रही हैं, उन पर भारत की स्थिति स्पष्ट नहीं है।

अमेरिका ने 4 नवम्बर तक भारत सहित चीन, पाकिस्तान व अमेरिका से कहा है कि ईरान के साथ व्यापारिक सम्बंध समाप्त करे अन्यथा वह उस पर प्रतिबंध लगा देगा। इसका मतलब यह हुआ कि भारत या तो ईरान के साथ सम्बंध समाप्त करे अथवा अमेरिका के साथ। ईरान के साथ भारत के सिविलीजेशनली रिलेशन हैं। इसके अतिरिक्त ईरान उसे रियायती दामों पर क्रूड ऑयल देता है। यानि सम्बंध तोड़ते ही भारत को पेट्रोलियम मूल्य वृद्धि की मार झेलनी पड़ेगी। इस स्थिति में भारत का करेंट एकाउंट डेफिसिट, फिस्कल डेफिसिट, इन्फ्लेशन बढ़ सकता है और करेंसी कमजोर पड़ सकती है जो अर्थव्यवस्था की ग्रोथ और साख पर प्रभाव डालेगी।

दूसरी-सीरिया को लेकर हो रहे ध्रुवीकरण के कारण मॉस्को-बीजिंग-तेहरान बनाम वाशिंगटन एवं नाटो देशों के बीच कूटनीतिक संतुलन सम्बंधी। भारत जो भी एक रास्ता चुनेगा, दूसरी तरफ से सम्बंधों शुष्कता अवश्य आएगी जिसका असर आर्थिक एवं कूटनीतिक लाभांशों पर पड़ेगा। ऐसे में सवाल यह उठता है कि क्या भारत गुटनिरपेक्षता की नीति को पुनर्जीवित करेगा या किसी एक ध्रुव का हिस्सा बनेगा?

बहरहाल रूसी राष्ट्रपति पुतिन रूस को सोवियत युग में ले जाना चाहते हैं और ट्रंप अमेरिका को सुनहरे युग में। दोनों की अहमन्यतावादी सोच दुनिया को धीरे-धीरे हायब्रिड वॉरफेयर के मुहाने तक पहुंचाती हुयी दिख रही है, जिसे हम नये शीतयुद्ध के रूप में देख सकते हैं।